Vol. 7, Issue -2 (July 2018) pp. 28-32 Sangeet Galaxy
ISSN: 2319-9695

# संगीतकला का विकास क्रम : एक संक्षिप्त अध्ययन

जुही शर्मा (शोधर्थिनी)
बैकुण्ठी देवी कन्या महाविद्यालय, आगरा,
E-mail : juhish.14@gmail.com

**सारांश**

*प्रस्तुत विषय 'संगीत कला के पुनरुत्थान की प्रासंगिकता' के अन्तर्गत यह दर्शाने का प्रयत्न किया गया है, कि विभिन्न कालावधियों में होने वाले परिवर्तनों के प्रभाव स्वरूप भारतीय संगीत कला उत्थान–पतन को प्राप्त करती हुई विकास मार्ग पर निरन्तर आगे बढ़ती रही। क्या समय परिवर्तन इसका प्रमुख कारण रहा या अन्य कारणोंवश कभी तो यह कला सर्वोत्कृष्ट रूप में रही, तो कभी इसकी दशा शोचनीय हो चली। प्राचीन काल में संगीत कला का मूल स्वरूप क्या था तथा अपनी विकास–यात्रा में विभिन्न परिवर्तनों व स्वरूपों को आत्मसात करती हुई, उत्थान–पतन की प्रक्रिया से गुजर कर अपनी सुदृढ़ स्थिति तक पहुँच सकी अर्थात् किस प्रकार संगीत कला का पुनरुत्थान होना संभव हो पाया तथा पुनरुत्थान के पश्चात् वर्तमान में इस कला की क्या स्थिति है और भविष्य में यह कला किस दिशा में जा रही है, इस विषय पर चर्चा प्रस्तुत शोध–पत्र में की गई है। इसके अतिरिक्त वर्तमान में संगीत कला का उचित रूप से संरक्षण तथा प्रचार–प्रसार किस प्रकार किया जाय जिससे इसके मौलिक रूप को हानि भी न पहुँच पाये तथा इसका ज्ञान संगीत विद्यार्थियों के लिए उपयोगी सिद्ध हो सके।*

**मुख्य शब्द** – परिवर्तन, पुनरुत्थान, उत्थान–पतन, आत्मसात, मौलिक।

## प्रस्तावना

समय परिवर्तन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके प्रभाव से सम्पूर्ण जगत में कुछ भी अछूता नहीं रह पाता है। समय परिवर्तन प्रक्रिया के साथ ही अन्य परिवर्तन भी होते चलते हैं, जैसे कि राजनैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक आदि। इनमें से सांस्कृतिक परिवर्तन के अन्तर्गत भिन्न–भिन्न कालावधियों में भिन्न–भिन्न संस्कृतियों का प्रभाव तत्कालीन कलाओं पर भी पड़ता है। परिवर्तनों के फलस्वरूप कई कलाओं का उदय होता है, तो कई कलायें विलुप्त हो जाती हैं। ऐसे ही कुछ परिवर्तनों के प्रभाव स्वरूप भारतीय संगीत कला भी अछूती नहीं रही है। संगीत कला की उत्पत्ति से लेकर वर्तमान काल तक यह स्वयं में कई उतार–चढ़ाव समेटे हुए समय के साथ निरन्तर आगे बढ़ती रही है। विविध कालखण्डों के सांस्कृतिक परिवर्तनों का प्रभाव भारतीय संगीत कला पर पड़ता रहा, जिसके प्रभाव स्वरूप कभी तो यह चरमोत्कर्ष पर रही तो कभी केवल मनोरंजन का साधन मात्र बनकर रह गई। हर कालावधि में संगीत कला के बदलते हुए स्वरूप, भिन्न–भिन्न शैलियाँ, नवीन और विविध प्रयोग, संगीत कला के उत्थान–पतन के पीछे छिपे कारणों की जानकारी प्राप्त होती है।

## संगीतकला का उत्थान–पतन एक संक्षिप्त दृष्टि

अनादिकाल से ही संगीत इस चराचर जगत में व्याप्त है तथा मानव के जीवन का एक अभिन्न अंग है। यदि इतिहास पर दृष्टिपात करें तो हड़प्पा सभ्यता से ही मानव के संगीतानुरागी होने का साक्ष्य मिलता

है। परतु संगीत का एक कला के रूप में प्रयोग प्रामाणिक रूप से वैदिक कालीन इतिहास व वैदिक कालीन ऐतिहासिक ग्रन्थों से प्राप्त होता है। वैदिक काल का समय लगभग 1500ई0पू0 माना जाता है। वैदिक काल का प्रमुख आधार वेद है। वेदों की रचना का काल होने के कारण तत्कालीन समय वैदिक काल कहलाया। इस काल में संगीतकला चरमोत्कर्ष पर थी। वैदिक, संगीत, नैतिकता व सात्विकता से परिपूर्ण था। वेदों को मानव जीवन का आधार ग्रन्थ कहा जाता है। चारों वेदों ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद में से सामवेद संगीतमय है। यह भारतीय संगीत का मूल है। चूँकि वेदों का मूल उद्देश्य नैतिकता तथा उच्च आदर्शों का निर्माण करना था। अतः वेदों में निहित ज्ञान को अधिक प्रभावी बनाने हेतु संगीत का आधार लेकर सामवेद की रचना की गई। सामवेद की सांगीतिक ऋचाओं के माध्यम से मानव जीवन को स्वस्थ बनाने हेतु संगीत कला को ईश्वर व मोक्ष प्राप्ति का साधन बता कर मानव जीवन में संगीत कला की आवश्यकता और महत्व को बढ़ावा दिया गया।

"इस काल में संगीत केवल उपासना का साधन माना जाता था। इसे व्यवसाय का उपकरण स्वीकार न किया जाता था, दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि संगीत केवल शक्ति, उपासना, कर्म, ज्ञान आदि तक ही सीमित था।"[1]

वैदिक काल के पश्चात् अन्य कालों जैसे जैन युग, बौद्ध युग, पुराण, उपनिषद्, मौर्य व गुप्त आदि कालों में भी संगीत कला परिवर्तनों को प्राप्त होती रही। प्रत्येक कालखण्ड में संगीत कला में नए आयाम जुड़ते गए, नए सांगीतिक ग्रन्थों की रचना हुई, कई दैदीप्यमान कलाकारों का उदय भी हुआ अर्थात् किसी न किसी रूप में संगीत कला में नवीन अध्याय जुड़ते गए, परन्तु वैदिक काल जैसी आभा अब संगीत कला में न रही थी। लगभग 330 ई0 में गुप्तकाल में संगीत की स्थिति कुछ सुदृढ़ हुई, उसका कारण कुछ गुप्तकालीन राजाओं (शासकों) का संगीत मर्मज्ञ होना था, जिनमें समुद्रगुप्त का नाम सर्वोपरि है। परन्तु यवनों के आक्रमण के बाद से अर्थात् 1100 ई0 से संगीत कला के स्तर में गिरावट आनी प्रारम्भ हो गई। मुस्लिम आक्रान्ताओं के प्रभाव स्वरूप जो सांस्कृतिक बदलाव आये उसके कारण मध्यकाल में संगीत की स्थिति दयनीय हो गई। इन परिवर्तनों का प्रभाव संगीत कला की शिक्षण प्रक्रिया पर भी पड़ा। प्राचीन शिक्षा प्रणाली गुरु–शिष्य परम्परा मध्यकाल में घराना परम्परा में परिवर्तित हो गई। तत्कालीन वातावरण के प्रभाव स्वरूप घराना शिक्षण प्रक्रिया में भी विसंगतियाँ उत्पन्न हो गई। संगीत के शिक्षकों की आपसी, ईर्ष्या व द्वेष की भावना राजघरानों में अपनी सुदृढ़ स्थिति बनाने व अति महत्वाकांक्षा जैसी भावनाओं ने संगीत कला को निम्न स्तर पर लाकर खड़ा कर दिया––

*"शास्त्रीय संगीत जनता से हटकर सामन्तशाही बन गया और उसमें सस्ता श्रृंगार भरा जाने लगा। इस प्रकार संगीत अपनी नैतिकता के पवित्र स्तर से गिरता गया।"*[2]

मध्यकाल में ही तेरहवीं शताब्दी में शारंगदेव द्वारा रचित ग्रन्थ 'संगीतरत्नाकर' संगीत कला के विकास हेतु महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ। कुछ मध्यकालीन शासक जैसे– अलाउद्दीन खिलजी, सिकन्दर लोदी, हुमायूँ व अकबर आदि संगीत प्रेमी थे। इन्होंने संगीत कला के विकास में बहुत सहयोग प्रदान किया। इनके काल में कई बड़े संगीतज्ञ भी हुए जिनमें हरिदास, बैजूबाबरा व तानसेन प्रमुख हैं। जिन्होंने अपने प्रयासों से संगीतकला का स्तर सुधार उसका उपयुक्त प्रचार–प्रसार किया। कुछ भक्त कवियों व संगीतज्ञों–– कबीर, सूर, तुलसी, मीरा आदि के द्वारा भक्ति संगीत के माध्यम से जनमानस के बीच संगीत कला को पुनः स्थापित करने व उनके अन्तर्मन को पवित्रता से भरने का प्रयास किया। परन्तु यह प्रयास भी अधिक समय तक सार्थक सिद्ध न हो सका और संगीत कला का स्तर पुनः गिरने लगा।

मुगल बादशाह औरंगजेब (1658–1707) के काल में संगीत कला की स्थिति दयनीय होने लगी थी। इस काल में अधिकांश संगीत ग्रन्थों को नष्ट कर दिया गया था। मध्यकाल के अन्तिम चरण तक संगीत से नैतिकता पूर्णतः समाप्त हो चुकी थी। संगीत केवल राजदरबारों की शोभा बढ़ाने और मनोरंजन का साधन बन चुका था। इसके बाद के काल में 18वीं शताब्दी में दो महान संगीतज्ञ सदारंग–अदारंग ने कई नवीन ख्यालों की रचना कर संगीत कला को समृद्ध बनाने का प्रयत्न किया, परन्तु अंग्रेजी शासन काल तक संगीत कला भोग–विलास और आमोद–प्रमोद का साधन मात्र बनकर रह गई थी। अँग्रेज भारतीय संगीत को निम्न कोटि का समझते थे। तत्कालीन सभ्रान्त परिवारों में संगीतकला को हेय दृष्टि से देखा जाने लगा था व कुलीन स्त्रियों को संगीत सीखने की अनुमति नहीं मिलती थी। जिसके कारण संगीतकला पतन को प्राप्त होती जा रही थी।

चूँकि परिवर्तन यदि किसी कला को पतनोन्मुखी बना सकता है तो वहीं दूसरी ओर वह उसके पुनरुत्थान का कारण भी बनता है। यहाँ पुनरुत्थान से आशय है– गिरकर पुनः उठना। ऐसा ही भारतीय संगीत कला के साथ भी हुआ। इस संदर्भ में आधुनिक काल में विष्णुनारायण भातखण्डे (1860) व विष्णु दिगम्बर पलुष्कर (1872) के अथक प्रयासों के फलस्वरूप संगीत कला अपनी खोई हुई गरिमा पुनः प्राप्त कर सकी। जहाँ एक ओर पं0 विष्णु दिगम्बर ने संगीत के नैतिक स्वरूप को सभांला, वहीं भातखण्डे ने संगीत की बिखरी हुई सम्पदा को एकत्रित कर संगीत जिज्ञासुओं को उससे लाभान्वित कराया।

*"आज इन महानुभावों के प्रयत्नों के फलस्वरूप ही संगीत को शिक्षण संस्थानों में एक विषय के रूप में पढ़ाया जा रहा है।"*[3]

विष्णुद्वय ने भारतीय संगीत को एक नवीन स्वर लिपि पद्धति से भी परिचित कराया जिससे रागों की बन्दिशों को समझ ज्ञान प्राप्त कर सकना सरल बन सका, जिसमें भातखण्डे की स्वर लिपि पद्धति वर्तमान में उत्तर भारतीय संगीत का आधार बनी हुई है। इन दोनों विद्वानों के प्रयासों के कारण संगीत विद्यालयों की स्थापना हुई, कई बड़े संगीत सम्मेलनों का आरम्भ हुआ तथा संगीत की एक विषय के रूप में विद्यालयों में शिक्षा आरम्भ हो पायी। जो विद्यार्थी संगीत कला के ज्ञान से वंचित रह जाते थे वह आज इस कला के ज्ञानार्जन का लाभ ले पा रहे हैं। इसके अतिरिक्त कई संगीतज्ञ जैसे– पं0 ओमकारनाथ ठाकुर, आचार्य वृहस्पति, कृष्णानन्द व्यास, फ़ैयाज़ खाँ, बड़े गुलाम अली खाँ, पं0 भीमसेन जोशी, पं0 रवीशंकर आदि कई ऐसे गुणी कलाकारों, संगीतज्ञों के सतत् प्रयत्नों के फलस्वरूप वर्तमान में संगीतकला की स्थिति पुनः सुदृढ़ हो सकी है।

संगीत कला के उत्थान में संगीत विद्यालय महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। इन विद्यालयों तथा संस्थानों में संगीत कला के आदर्श स्वरूप को संगीत शिक्षकों द्वारा प्रस्तुत किया जाता है। वर्तमान में ऐसे कई संगीत विद्यालय/महाविद्यालय/संस्थान हैं, जिनसे संगीत की उच्च शिक्षा संगीत विद्यार्थियों को प्राप्त हो पा रही है। जैसे– प्रयाग संगीत समिति (इलाहाबाद), प्राचीन कला केन्द्र (चण्डीगढ़), विश्व भारती शान्ति निकेतन (प0बं0), भातखण्डे विद्यापीठ (लखनऊ), इन्द्राकला संगीत विश्वविद्यालय (खेरागढ़) आदि। इसके अतिरिक्त बड़े संगीत सम्मेलनों जैसे– स्वामी हरिदास संगीत समारोह (वृन्दावन), तानसेन समारोह (ग्वालियर), हरिवल्लभ संगीत सम्मेलन (पंजाब), संवाई गंधर्व भीमसेन महोत्सव, सप्तक वार्षिक संगीत सम्मेलन आदि कई ऐसे संगीत सम्मेलन हैं जिनमें उपस्थित कलाकारों की प्रस्तुतियों द्वारा उनकी शैलियों व विशिष्टताओं के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त होता है, जो इस कला के विकास में सहायक हैं। इसके अतिरिक्त संगीत गोष्ठियों, पत्र–पत्रिकाओं के द्वारा भी विभिन्न विद्वानों के विचारों से अवगत हो संगीत के विभिन्न रोचक तथ्यों व स्वरूप की जानकारी प्राप्त होती है।

वर्तमान समय में नवीन तकनीकी प्रयोगों व उपकरणों ने भी इस कला के पुनरुत्थान व प्रचार में सहयोग प्रदान किया है। रेडियो, टी0वी0, कम्प्यूटर तथा इण्टरनेट के प्रयोग ने तो संगीत कला को सर्वसुलभ बना जनसाधारण तक पहुँचाया है। टी0वी0 पर प्रसारित सांगीतिक कार्यक्रमों ने जन–जन को इस कला से जोड़ दिया है। संगीत विषय का ज्ञान आज हर विद्यार्थी इण्टरनेट के प्रयोग द्वारा घर बैठ कर ही प्राप्त कर सकता है। आज संगीत शिक्षा प्रत्येक संगीत विद्यार्थी को सुलभ है––

*"इस युग में संचार के अनेक इलैक्ट्रोनिक माध्यमों के प्रयोग ने शिक्षा के विविध क्षेत्रों में तेजी से प्रगति की है, वहीं संगीत शिक्षा भी इससे प्रभावित हुई है। इन माध्यमों के प्रयोग से संगीत कला अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर लोकप्रिय हुई है।"*[4]

संगीत कला के विकास व पुनरुत्थान में दूरस्थ संगीत शिक्षा ने भी सहयोग प्रदान किया है। जिसके द्वारा संगीत कला का ज्ञान किसी भी विद्यार्थी को कहीं भी प्राप्त हो सकता है। दूरस्थ शिक्षा में नवीन तकनीकी प्रयोग ने इसे सुगम बना दिया है। आज संगीत कला का विषय कला और मनोरंजन आदि के रूप में चहुँमुखी विकास हो रहा है, नये रूप में संगीत कला उत्थान को प्राप्त हो रही है तथा नित नये आयामों को छू रही है, परन्तु यह उत्थान किस दिशा में जा रहा है यह एक चिंतन का विषय है। नित नए प्रयोगों द्वारा इस कला का उत्थान और विकास तो हो रहा है पर उसके दूरगामी प्रभाव क्या होंगे यह विचारणीय विषय है––

*"नाम दाम प्राप्त करने की अन्धी दौड़, मीडिया द्वारा सही पथ प्रदर्शन का अभाव, रातों रात छा जाने की प्रवृत्ति ने इस विषय को गंभीर क्षति पहुँचाई है।"*[5]

वर्तमान समय में विद्यार्थियों को भी पहले की भाँति कठोर नियमों में बँधकर शिक्षा ग्रहण नहीं करनी पड़ती है, वह जैसी चाहे वैसी शिक्षा स्वतन्त्र रूप से प्राप्त कर सकता है। परन्तु इस स्वतन्त्रता का प्रयोग उसे किस प्रकार करना है, यह उसके ऊपर निर्भर करता है। आज के विद्यार्थी में धैर्य व सहजता जैसी भावनाओं का अभाव है। विद्यार्थीगण शीघ्र ही संगीत कला का ज्ञान अर्जित कर प्रसिद्धि पाना चाहते हैं, परन्तु संगीत के विद्यार्थियों को यह ज्ञात होना चाहिए कि शीघ्र सफलता प्राप्ति की प्रवृत्ति व पश्चिमी शैलियों का अनुकरण कर वे अपने भविष्य के साथ खिलवाड़ कर रहे हैं तथा संगीत कला के स्वरूप को अज्ञानतावश हानि पहुँचा रहे हैं। आज के संगीत विद्यार्थियों व संगीत प्रेमियों को चाहिए कि वे इस प्रकार की चेष्टाओं से बचते हुए अपने सार्थक प्रयासों द्वारा संगीत कला के पुनरुत्थान में भागीदार बनें।

**निष्कर्ष**

प्राचीन काल में संगीत कला का जो नैतिक स्तर था वर्तमान में उसके दर्शन आज प्रायः नहीं होते हैं। विष्णुद्वय तथा अन्य गुणी कलाकारों ने अपने अथक प्रयासों से पतनोन्मुखी होती हुई इस संगीत कला को जो पुनः आधार प्रदान किया था, जिसे थामकर आज कई संगीत विद्यार्थी व कलाकार प्रगति तो कर रहे हैं, परन्तु किस दिशा में– यह एक विचारणीय बिन्दु है। संगीत कला में विविधता लाने, अधिक उत्कृष्ट बनाने जैसे प्रयासों द्वारा कहीं हम उसे उसके मौलिक स्वरूप से हटा, पुनः पतन की ओर तो नहीं ले जा रहे हैं। हमें स्वयं यह सुनश्चित करना होगा कि वर्तमान में संगीत कला का पुनरुत्थान हो रहा है या पतन ? अतः वर्तमान समय में नवीन और परिष्कृत सोच के साथ यह संकल्प करना होगा कि संगीत कला के अन्तर्भूत मूल सौन्दर्य व आदर्श स्वरूप को सँभालते हुए इस कला के

संरक्षण में सहयोगी बनना होगा। संगीत कला की आत्मा उसकी सरसता, पवित्रता को ध्यान में रखकर वर्तमान संगीत विद्यार्थी व संगीतानुरागियों को इस कला के पुनरुत्थान हेतु हर सफल सम्भव प्रयास करना होगा।

## संदर्भ सूची

[1] सिंह जोगिन्द्र 'बाबरा', *भारतीय संगीत का इतिहास* : 1996 : पृ0 8 : ए0बी0एस0 पब्लिकेशन, जालंधर।
[2] बसंत, *संगीत विशारद* : संस्करण 29 : पृष्ठ 20 : संगीत कार्यालय, हाथरस।
[3] चंद्र डॉ0 हुकुम, *आधुनिक काल में शास्त्रीय संगीत* : 1998 : पृष्ठ 23 : ईस्टर्न बुक लिंकर्स, जवाहर बाग, दिल्ली।
[4] शर्मा डॉ० नीलू, *संगीत के क्षेत्र में इण्टरनेट की भूमिका (तबला वाद्य के संदर्भ में)* : मई 2006 : पृष्ठ 24 : संगीत कला विहार ।
[5] प्रो0 दीक्षित प्रदीप कुमार 'नेहरंग', *आदर्श संगीत शिक्षा व्यवस्था* : सितम्बर 2010 : पृष्ठ 26 : संगीत कला विहार।